SIDO KANHU MURMU UNIVERSITY DUMKA, JHARKHAND

STUDY MATERIAL FOR U. G. SEM VI {SANSKRIT}

(पाठ्यांश – कौटिल्य का अर्थशास्त्र प्रथम अधिकरण)

By: Dr. D. K. Mishra

अर्थशास्त्र : उद्भव और विकास

अर्थशास्त्र सामान्य अर्थ – भारतीय संस्कृति में धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष पुरूषार्थचतुष्टय के रूप में जाना जाता है। भारतीय समाज में त्रिवर्ग 'धर्म–अर्थ–काम' पर प्रारम्भ से विशद् विचार प्रस्तुत किए गए तथा ग्रन्थों की रचना की गई। अर्थ सम्बन्धी शास्त्र अर्थशास्त्र कहलाया। यद्यपि अर्थशास्त्र को सिर्फ 'अर्थ' तक सीमित रखना अनुचित होगा तथापि सामान्य रूप से इसे अर्थ नामक पुरूषार्थ से सम्बन्धित माना जा सकता है।

'अर्थशास्त्र' की परम्परा के प्रकाण्ड पण्डित आचार्य चाणक्य के अनुसार – मनुष्यों की जीविका को अर्थ कहते हैं। मनुष्यों से युक्त भूमि को भी अर्थ कहते हैं। इस प्रकार की भूमि को प्राप्त करने और उसकी रक्षा करने वाले उपायों का निरूपण करने वाला शास्त्र 'अर्थशास्त्र' कहलाता है।

कौटिल्य के हीं शब्दों में – ***"मनुष्याणां वृत्तिरर्थः, मनुष्यवती भूमिरित्यर्थः, तस्याः पृथिव्या लाभपालनोपायः शास्त्रमर्थशास्त्रम् इति।"***

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अर्थशास्त्र धर्म, अर्थ तथा काम में प्रवृत्त कराने के साथ–साथ उनकी रक्षा करता है तथा धर्म के विरोधी अधर्मों को नष्ट करता है। प्राचीन भारतीय राजनीति और शासन के क्षेत्र में जिस शास्त्र का सहारा लिया जाता था वह अर्थशास्त्र है। इस प्रकार राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, चिकित्साशास्त्र, विज्ञान एवं कृषिशास्त्र, शिक्षा–धर्म एवं नीतिशास्त्र का निचोड़ हीं 'अर्थशास्त्र' है।

अर्थशास्त्र : उद्भव और विकास – आरम्भ में धर्म, अर्थ और काम इस त्रिवर्गशास्त्र पर एक ही साथ विचार किया गया। इन तीनों शास्त्रों के स्वतन्त्र अस्तित्व की विविक्ति बाद में हुई।

महाभारत के शान्तिपर्व से ज्ञात होता है कि इस त्रिवर्गशास्त्र के रचयिता ब्रह्मा थे और बाद में भगवान् शंकर ने ब्रह्मा द्वारा रचित उस वृहद् धर्म–अर्थ–कामात्मक शास्त्र का संक्षेप किया जिसका नाम हुआ – ''वैशालाक्ष''। कालान्तर में धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र और कामशास्त्र का प्रणयन इसी वैशालाक्ष के आधार पर हुआ। इस प्रकार अर्थशास्त्र का उद्भव स्पष्ट है।

अर्थशास्त्र पर प्रथम ग्रन्थ था – बाहुदन्तक। महाभारत के अनुसार इसकी रचना सहस्राक्ष इन्द्र ने की जो बाहुदन्ती के पुत्र थे। वृहस्पति ने भी अर्थशास्त्र की रचना की थी, वात्स्यायन के कामसूत्र में इस बात की प्रमाणिकता मिलती है। वृहस्पति देवों के पुरोहित थे। महाभारत में भी इन्हें देवगुरू और अर्थशास्त्र का रचयिता कहा गया है। देवगुरू वृहस्पति अर्थशास्त्र के अपूर्व विद्वान् हुए। इनकी रचना 'वार्हस्पत्य अर्थशास्त्र' कहलायी। परवर्त्ती ग्रन्थों में इनके वचन उपलब्ध होते हैं।

अर्थशास्त्र के विकास की परम्परा को महर्षि अंगिरा ने आगे बढ़ाया। उशना कवि (शुक्राचार्य) भी अर्थशास्त्र के विद्वान् और अर्थशास्त्र विषयक ग्रन्थ के निर्माता थे। इनकी रचना 'औशनस–अर्थशास्त्र' थी, चरक संहिता में ऐसा वर्णन है। इसी परम्परा में एक नाम 'पिशुन' (नारद) का बड़े आदर से आचार्य कौटिल्य ने लिया है। पिशुन का वृहद् अर्थशास्त्र विष्णुगुप्त के समय तक वर्तमान था। रामायण में भी अर्थशास्त्र के अनेक श्लोक उद्धृत हैं।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में आचार्य कौटिल्य ने अनेक विद्वानों का मत उपस्थापित किया है। निश्चय हीं वे प्राचीन अर्थशास्त्री रहे होंगे। यथा – द्रोण, भारद्वाज, भागुरी नाम्नी विदुषी। आचार्य कौणपदन्त भी अर्थशास्त्र के रचयिता थे। महाभारत काल में जितने भी अर्थशास्त्रविद् हुए उनमें भीष्म का नाम प्रमुख है। दीर्घचारायण भी अर्थशास्त्र के विकास की परम्परा के एक आचार्य माने जाते हैं। इस प्रकार अर्थशास्त्र की विकास गाथा बड़ी लम्बी है।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र :– अर्थशास्त्र का जो ग्रन्थ हमें उपलब्ध है तथा जिसका अध्ययन हमें अपेक्षित है, वह है आचार्य विष्णुगुप्त (कौटिल्य, चाणक्य) रचित कौटिलीय अर्थशास्त्र। अर्थशास्त्र विषय का यह प्रामाणिक तथा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें 15 अधिकरण, 150 अध्याय तथा 180

प्रकरण है। इसकी रचना पारंगत राजनीतिज्ञ, मौर्य वंश के संस्थापक चन्द्रगुप्त मौर्य के गुरू एवं महामन्त्री कौटिल्य ने ई0पू0 चौथी शताब्दी में की।

कौटिलीय अर्थशास्त्र के **प्रथम अधिकरण की विषयवस्तु** अत्यन्त सारगर्भित एवं सम्पूर्ण अर्थशास्त्र की नींव है। प्रथम अधिकरण में निम्नलिखित विन्दुओं पर व्यापक विचार किया गया है –

1. विद्या समुद्देश्य
2. आन्वीक्षिकी स्थापना
3. त्रयी स्थापना
4. वृद्धसंयोग
5. अरिषड्वर्गत्याग अर्थात् इन्द्रियजय
6. राजर्षिवृत्त
7. अमात्यनियुक्ति
8. मन्त्री और पुरोहित की नियुक्ति
9. गुप्त उपायों से अमात्यों के आचरण की परीक्षा
10. गूढ़पुरूषोत्पत्ति अर्थात् गुप्तचरों की नियुक्ति
11. राजा के कार्य–व्यापार
12. राजभवन का निर्माण
13. आत्म–रक्षा।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण की विषय वस्तु विस्तृत एवं सारगर्भित है। एक सफल प्रशासक के गुणों की चर्चा एवं एक आदर्श राजा की विशिष्टताओं का विवेचन यहाँ मिलता है। राजा की सफलता, राजतन्त्र की सफलता एवं धर्म–अर्थ–काम इन

तीन पुरूषार्थों का विस्तृत विवेचन यहाँ उपलब्ध है। इसमें अर्थ पर विशेष बल दिया गया है क्सोंकि अर्थ से हीं धर्म और काम की सिद्धि होती है।

****

अर्थशास्त्र और उसके प्रमुख विषय

प्राचीन भारत में राजनीति को अन्य नीतियों की तरह बहुत महत्त्व दिया गया। कहते हैं कि सुव्यवस्थित राज्य में ही सभी शास्त्र पनपते हैं। इसलिए राज्य को सुदृढ़ करने के लिए राजनीतिशास्त्र से सम्बद्ध विषयों पर पर्याप्त चर्चा होती रही। महाभारत का शान्तिपर्व इस दृष्टि से बहुत महत्त्व का है। प्राचीन धर्मशास्त्री और स्मृतिकार भी राजनीति की विवेचना करते हैं किन्तु राजनीतिविषयक सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ कौटिल्य का अर्थशास्त्र है। इसके रचनाकार मौर्यवंश के प्रतिष्ठापक चाणक्य या कौटिल्य कहे जाते हैं। इसमें पन्द्रह अधिकरण हैं, जिन्हें अध्यायों में विभक्त किया गया है। सम्पूर्ण अर्थशास्त्र सूत्रात्मक है। कहीं–कहीं श्लोकों में सूत्र की बातें दुहराई गई हैं।

अर्थशास्त्र में राजा की शिक्षा, मन्त्रियों की नियुक्ति, गुप्तचरों की नियुक्ति, विभिन्न विभागीय अधीक्षकों के कर्त्तव्य, राज्य के द्वारा दुष्ट नागरिकों का दमन, कृत्रिममूल्यवृद्धि–मिलावट तथा गलत माप–तौल को रोकने के उपाय, राज्य के सात अंग, शान्ति और उद्योग, शत्रु पर आक्रमण, युद्ध, दुर्ग का घेरा, विष–प्रयोग आदि अनेक विषयों का सांगोपांग वर्णन है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र को कठोर अनुशासनबद्ध राजतन्त्र की दृष्टि से लिखा है। राजा आन्तरिक व्यवस्था रखे, प्रजा की रक्षा करे और युद्ध के लिए सदा तत्पर रहे। अर्थशास्त्र इस सिद्धान्त को मानता है कि लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधनों का अच्छा–बुरा होना महत्त्वपूर्ण नहीं है।

अर्थशास्त्र के प्रमुख विषयों को संक्षेप में हम इस प्रकार कह सकते हैं –

1. **राजा की शिक्षा** – राजा को आन्वीक्षकी, त्रयी, वार्त्ता और दण्डनीति इन चार प्रकार के विद्याओं को ग्रहण करना चाहिए। ये विद्याएँ समस्त कार्यों की सिद्धि में सहायक होती हैं। राजा विद्वानों के साथ रहकर अपनी बुद्धि का विकास करे।

2. **मन्त्रियों की नियुक्ति** – इस विषय में आचार्य कौटिल्य कहते हैं कि राजा विद्या, बुद्धि, साहस, गुण, दोष, देश, काल और पात्र का विचार करके हीं आमात्यों की नियुक्ति करे। स्वदेशोत्पन्न, कुलीन, अवगुणशून्य, निपुण, अर्थशास्त्रवेत्ता, वाक्पटु, उत्साही,

धैर्यवान्, स्थिरप्रकृति, प्रियदर्शी और द्वेषवृत्तिरहित पुरूष को प्रधानमन्त्री के पद पर नियुक्त करे।

3. **गुप्तचरों की नियुक्ति** – कापटिक, उदास्थित, गृहपतिक, वैदेहक, तापस, सत्री, तीक्ष्ण, रसद और भिक्षुकी आदि अनेक प्रकार के गुप्तचरों की नियुक्ति राजा अच्छी तरह परीक्षा लेकर अमात्यों एवं पुरोहितों की सलाह पर करे।
4. **विभिन्न विभागीय अधीक्षकों के कर्त्तव्य** – अर्थशास्त्र में विभिन्न विभागीय अधीक्षकों के कर्त्तव्य का वर्णन आचार्य कौटिल्य ने अत्यन्त रोचक ढ़ंग से किया है। समाहर्त्ता को दुर्ग, राष्ट्र–खनिज, सेतु, वन, व्रज तथा व्यापार सम्बन्धी कार्यो का निरीक्षण करना चाहिए।
5. **राज्य के दुष्ट नागरिकों का दमन** – अर्थशास्त्रकार आचार्य विष्णुगुप्त की मान्यता है कि बनावटी साधु, वणिक् वर्ग, शिल्पकार, कारीगर, नट, भिक्षुक तथा ऐन्द्रजालिक आदि चारों से एवं इसी जरह के अन्य पुरूष जो राष्ट्र का अहित करते हैं, प्रजा को कष्ट देते हैं, उनसे प्रजा की रक्षा करना राजा का उत्तरदायित्व है। राजा राज्य के दुष्ट नागरिकों का बलपूर्वक एवं न्यायोचित ढ़ंग से दमन करे।
6. **कृत्रिममूल्यवृद्धि–मिलावट तथा गलत माप–तौल को रोकने के उपाय** – व्यापारीगण प्रायः अधिक मूल्य लगाकर, नकली वस्तु देकर अथवा कम माप तौल कर प्रजा को प्रायः ठगा करते हैं, नुकसान पहुँचाया करते हैं। अतएव राजा पण्याध्यक्ष के द्वारा मूल्य सुनिश्चित करे और पौतवाध्यक्ष समय–समय पर माप–तौल का निरीक्षण करें।
7. **राज्य के सात अंग** – अर्थशास्त्रकार आचार्य कौटिल्य ने राज्य के सात अंगों का विशद् वर्णन अर्थशास्त्र में किया है। राजा, आमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, सेना और मित्र ये राज्य के सात अंग हैं। इसे अर्थशास्त्र में सप्तांग सिद्धान्त कहा गया है।
8. **शान्ति और उद्योग** – अर्थशास्त्र में शान्ति और उद्योग पर विशद् चर्चा की गई है। मन्त्रिपरिषद् के सहयोग से राजा राज्य में शान्ति और उद्योग की व्यवस्था करे। शान्ति एवं उद्योग राष्ट्र के विकास का मूलमन्त्र है।

9. **शत्रु पर आक्रमण** – यदि शत्रु अनावश्यक तंग कर रहा हो तो शत्रु पर समुचित आक्रमण कर उसे दण्डित करना चाहिए।
10. **युद्ध एवं दुर्ग का घेरा** – युद्ध एवं किला–बन्दी का वर्णन भी अर्थशास्त्र में आचार्य कौटिल्य ने बड़ी सूझ–बूझ एवं कुशलता से किया है।
11. **विष–प्रयोग** – आचार्य कौटिल्य ने कहा है कि विष–प्रयोग के द्वारा राजा अपने दुष्ट शत्रुओं से मुक्ति पा सकता है। इस कार्य में राजा विश्वसनीय विषकन्याओं का सहारा ले।
12. **न्याय प्रमाण** – धर्म, व्यवहार, चरित्र तथा राजशासन न्याय के चार पैर बताए गए हैं। धर्म और तर्क में परस्पर विरोध होने पर न्याय को प्रमाण मानना चाहिए।
13. **विवाह की स्थिति** – सामाजिक व्यवस्था में विवाह का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आचार्य कौटिल्य विवाह की स्थिति पर कहते हैं कि जिसका पति चरित्रहीन हो, परदेश चला गया हो और उसकी वापसी की कोई आशा न हो, राजद्रोही हो, अपने प्राणों का प्यासा हो, धर्म–भ्रष्ट हो चुका हो तथा नपुँसक हो वह पत्नी के द्वारा परित्याग के योग्य है –

"नीचत्वं परदेशं वा प्रस्थितो राजकिल्वषी।
प्राणाभिहन्ता पतितस्त्याज्यः क्लीबोऽपि वा पतिः।।"

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आचार्य कौटिल्य का अर्थशास्त्र राजनीति, अर्थनीति एवं सामाजिक नियमों का सारगर्भित शास्त्र है। तात्कालीन सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक समस्याओं को दिखाते हुए उसके समाधान का प्रयास करता है। राज्य, धर्म, नीति, समाज, अधिकारी, नगर, व्यापार, कानून, गुप्तचर, आश्रम, सेना, पोत, विद्या, विवाह ऐसे अनेक विन्दुओं पर गहन प्रकाश आचार्य विष्णुगुप्त के अर्थशास्त्र में आदर्श रूप में प्रस्थापित किया गया है।

****

कौटिल्य के अनुसार विद्याएँ

आचार्य कौटिल्य के अनुसार चार विद्याएँ हैं – आन्वीक्षिकी, त्रयी वार्त्ता और दण्डनीति। कौटिल्य के हीं शब्दों में – ***"आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्चेति विद्याः।"***

आचार्य कौटिल्य कहते हैं कि मनु सम्प्रदाय के अनुयायी उपर्युक्त चारों प्रकार की विद्याओं को मानते हैं। आचार्य वृहस्पति के अनुयायी विद्वान् केवल दो हीं विद्याएँ मानते हैं – वार्ता और दण्डनीति। त्रयी तो सांसारिक लोगों की आजीविका का साधन मात्र है। शुक्राचार्य के अनुयायी विद्वान् केवल दण्डनीति को हीं विद्या मानते हैं और उसी को सम्पूर्ण विद्याओं का स्थान एवं कारण स्वीकार करते हैं। 'चतस्रः एव विद्या इति कौटिल्यः।'' आचार्य कौटिल्य क`मत में विद्या चार हीं हैं। इसका वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है –

1. **आन्वीक्षिकी** :– आन्वीक्षिकी विद्या सभी विद्याओं में प्रधान है। यह विद्या त्रयी, वार्ता और दण्डनीति विद्याओं को विभिन्न कारणों से प्रधान और अप्रधान बताती हुई, संसार का उपकार करती है। सुख–दुःख के समय बुद्धि को विचलित नहीं होने देती है। सोच–विचार कर बोलना, कार्य करना आदि में कुशलता लाती है। सह विद्या सर्वदा हीं समस्त विद्याओं को प्रदीप्त करने वाली, सभी कार्यों की सिद्धि में सहायक एवं सभी धर्मों का आश्रय मानी गई है –

   ''प्रदीपः सर्वविद्यानामुपायः सर्वकर्मणाम्।
   आश्रयः सर्वधर्माणां शश्वदान्वीक्षकी मता।।

2. **त्रयी :– 'साम–ऋक्–यजुर्वेदास्त्रयस्त्रयी।'** सामवेद, ऋग्वेद और यजुर्वेद को त्रयी विद्या कहते हैं। अथर्ववेद और इतिहास वेद मिलकर कुल पाँच वेद कहलाते हैं। शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्द एवं ज्योतिष् – ये छः वेदांग हैं। त्रयी में निरूपित धर्म चारों

वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) तथा चारों आश्रमों (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास) को अपने–अपने धर्म में स्थाापित करने के कारण संसार में भलाई करने वाले कहे गए हैं अर्थात् त्रयी विद्या लोकोपकारक है। प्रत्येक वर्ण एवं प्रत्येक आश्रम का धर्म है कि वह किसी भी प्रकार की हिंसा न करे, सत्य बोले, पवित्र बना रहे, किसी से ईर्ष्या न करे, दयावान और क्षमाशील बना रहे। अपने धर्म का पालन करने से स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस प्रकार त्रयी विद्या लोकोकारिका है। त्रयी विद्या संसार में प्रजा को सदैव कर्म–धर्म के मार्ग पर चलना सिखाती है, जिस पर चलकर प्रजा प्रसन्नता एवं सुख को प्राप्त करती है –

''व्यवस्थितार्यमर्यादः कृतवर्णाश्रमास्थितिः।
त्रय्या हि रक्षतो लोकः प्रसीदति न सीदति।।''

इस प्रकार आचार्य कौटिल्य विद्याओं के वर्णन में 'त्रयी' नामक विद्या की स्थापना करते हैं। सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए मनुष्य का धार्मिक होना आवश्यक है अतएव यह विद्या लोकोपकारिका एवं श्रेष्ठ मानी गई है।

3. **वार्त्ता** :– आचार्य कौटिल्य के अनुसार ***–''कृषिपाशुपाल्ये वाणिज्या च वार्त्ता।''***

इस प्रकार वार्त्ता विद्या के अन्तर्गत कृषि, पशुपालन और व्यापार आते हैं। यह विद्या धनधान्यादि सम्पत्तियों को प्रदान करती है, अतएव उपकारी है। इसी विद्या से उपार्जित कोश और सेना के बल पर राजा स्वपक्ष और परपक्ष को वश में कर लेता है। आचार्य कौटिल्य कहना चाहते हैं कि वार्त्ता एक ऐसी विद्या है जिसके अनुसरण से राजा धन का उपार्जन करता है। राज्य में कृषि, पशुपालन और वाणिज्य के द्वारा अर्थोपार्जन होने से आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्त्ति होती है। राजा कर–ग्रहण के द्वारा अपना कोश समृद्ध करता है। इसी विद्या के बल पर सेना को धन की कमी नहीं होती। समाज में खुशहाली का वातावरण उपलब्ध होता है। राजा इस विद्या के बल पर स्वपक्ष एवं परपक्ष को वश में करता है। इसलिए वार्त्ता विद्या उपकारी है – ***''धान्यपशुहिरण्यकुप्यविशिष्ट प्रदानादौपकारिकी।''***

4. **दण्डनीति :–** दण्डनीति आचार्य कौटिल्य क`मत में चौथी एवं अन्तिम विद्या है। पूर्वोक्त तीन विद्याओं आन्वीक्षिकी, त्रयी और वार्त्ता की प्राप्ति और रक्षा इस 'दण्डनीति' नामक विद्या के विना असम्भव है। अतएव दण्डविद्या का अद्वितीय महत्त्व है। कौटिल्य कहते हैं कि अन्य आचार्यों माम त है कि दएडनीति पर हीं संसार का व्यवहार आश्रित है, इसलिए लोकव्यवहार को चलाने वाले राजा को हमेशा दण्ड देने के लिए तैयार रहना चाहिए क्योंकि प्राणियों को वश में लाने वाले दण्ड की तरह अन्य कोई साधन नहीं है। अन्य आचार्यों का मत उपस्थापित करने के बादराजनीतिज्ञ पण्डित कौटिल्य अपना मत प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि कठोर दण्ड प्राणियों को खिन्न करने वाला होता है। कोमल दण्ड राजा की अवहेलना करता है। समुचित दण्ड देने पर हीं राजा पूजनीय होता है क्योंकि अच्छी तरह से जानकर प्रयोग किया गया दण्ड प्रजा को धर्म, अर्थ और काम से युक्त कर देता है। यदि दण्ड का प्रयोग न किया जाय तो प्रजा में मत्स्य न्याय उत्पन्न हो जाता है। दण्ड धारण करने वाले राजा के न होने पर बलवान् व्यक्ति दुर्बल व्यक्तियों को निगल जाता है। राजा की दण्डनीति से रक्षित चारों वर्ण और चारों आश्रम के लोग स्वधर्म पर प्रवृत्त होकर, अपने कार्य में अनुरक्त होकर , अपने मार्ग पर चलते हैं –

"चतुर्वर्गाश्रमो लोको राजा दण्डेन पालितः।
स्वधर्मकर्माभिरतो वर्तते स्वेषु वर्त्यसु।।"

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कौटिल्य के अनुसार विद्याओं का जो वर्णन प्रस्तुत किया गया है वह निश्चय हीं कौटिल्य के प्रकाण्ड पण्डित, राजनीतिज्ञ एवं महामन्त्रीत्व के गुण को प्रकट करता है। पूर्व प्रचलित आचार्यों के मतों का उपस्थापन और अपने मत का सतर्क प्रस्तुतीकरण यह सिद्ध करता है कि विद्या के चारों प्रकार मान्य हैं।

****

कौटिल्य के अर्थशास्त्र के आधार पर राजा के कर्त्तव्य

कौटिल्य का अर्थशास्त्र प्राचीन भारतीय राजनीति का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। यह राजनीति और शासन का विश्वकोश है। इसमें 15 अधिकरण, 150 अध्याय और 180 प्रकरण हैं। राजनीति और शासन सम्बन्धित ग्रन्थ होने के कारण इसमें राजा के कर्त्तव्यों पर विस्तृत चर्चा की गई है।

अर्थशास्त्र के अनुसार राजा राज्य का प्रथम अंग होता है। कौटिल्य के अनुसार राजा उच्चकुलीन, धर्मनिष्ठ, सत्यवादी, कृतज्ञ, बलवान्, उत्साही, दृढ़प्रतिज्ञ, विनयशील, विवकेयुक्त, स्पष्ट विचार युक्त, तर्क–वितर्क–मन्त्र प्रवीण, तत्त्वज्ञाता, स्पष्टवक्ता, शास्त्र और शस्त्र मं प्रवीण, सन्धि–विग्रह के सम्यक् ज्ञान वाला, प्रजा पोषण में समर्थ तथा राज्यकोष में वृद्धि करने वाला आदि गुणों से युक्त होना चाहिए। कौटिल्य कहते हैं –

"प्रजासुखं सुखम् राज्ञः प्रजानाम् च हिते हितम्।
नात्मप्रियं हितं राज्ञः प्रजानाम् तु प्रियं हितम्।।"

अर्थशास्त्र में राजा के अनेक कर्त्तव्यों की व्यापक चर्चा की गई है। अर्थशास्त्र के अनुसार राजा के कुछ प्रमुख कर्त्तव्य निम्नलिखित हैं –

1. **इन्द्रिय विजय** :– राजा को काम, क्रोध, लसेभ, मोह, मद और हर्ष इन छः शत्रुओं का सर्वथा परित्याग करके इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना चाहिए।
2. **सत्संगति एवं बुद्धि विकास** :– राजा को विद्वान् पुरूषों की संगति में रहकर बुद्धि का विकास करना चाहिए।
3. **राष्ट्र ज्ञान** :– राजा को गुप्तचरों द्वारा स्वराष्ट्र और परराष्ट्र के वृतान्त का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।
4. **योगक्षेम सम्पादन** :– राजा को उद्योग द्वारा योगक्षेम का सम्पादन करना चाहिए।
5. **धर्मदृढ़ और प्रजानियन्त्रण** :– राजकीय नियमों द्वारा अपने–अपने धर्म पर दृढ़ बने रहने के लिए राजा को प्रजा पर नियन्त्रण रखना चाहिए।
6. **शिक्षा का प्रसार** :– राजा को शिद्वाा के प्रचार–प्रसार से प्रजा को विनम्र और शिक्षित बनाना चाहिए।
7. **लोकप्रियता को उत्सुक** :– प्रजाजनों को धन–सम्मान प्रदान करके राजा को अपनी लोकप्रियता को बनाये रखना चाहिए तथा दूसरे के हित साधन में उत्सुक रहना चाहिए।
8. **अहिंसा और सदाचार का पालन** :– इप्द्रियों को वश में रखता हुआ राजा परायी स्त्री, पराये धन और हिंसात्मक प्रवृत्ति का सर्वथा त्याग करे।
9. **निन्द्यकर्मत्याग** :– कुसमय में शयन करना, चंचलता, झूठ बोलना, अविनीतवृत्ति बनाये रखना आदि आचरणों की और इस प्रकार के आचरण वाले लोगों की संगति का परित्याग राजा को करना चाहिए। साथ हीं राजा को चाहिए कि वह अधर्माचरण और अनर्थकारी व्यवहारों का भी त्याग का दे।
10. **संतुलित जीवन :–** 'धर्म' और 'अर्थ' की मर्यादा में रहते हुए राजा 'काम' का भी सेवन करे। सर्वथा सुखरहित जीवन यापन न करे। परस्पर अनुबद्ध धर्म, अर्थ और काम इन त्रिवर्ग का सन्तुलित उपभोग करे। त्रिवर्ग का असन्तुलित उपभोग बहुत कष्टकारक सिद्ध होता है।

11. **मन्त्रिपरिषद् का सम्मानः–** एक पहिए की गाड़ी की भाँति राजकार्य भी सहयोग के विना नहीं चलाया जा सकता। अतः राजा को चाहिए कि वह सुयोग्य अमात्यों की नियुक्ति करके उनके परामर्शों को ह्रदयंगम करे।
12. **गुप्तचरों की नियुक्ति :–** राजा मन्त्री, पुरोहित, गुप्तचरों आदि की नियुक्ति सावधानी पूर्वक करे।
13. **पदाधिकारियों पर ध्यान :–** मंत्रिपरिषद्, गुप्तचर व्यवस्था, सेना, कोश, दुर्ग, जनपद, अमात्य एवं मित्र, पदाधिकारीगण आदि पर राजा यथोचित ध्यान रखे।
14. **दण्ड में सावधानी :–** राजा राजतन्त्र में अन्तिम न्यायालय एवं सर्वोच्च न्यायाधीश भी है, अतएव दण्ड के निर्धारण में राजा विशेष प्रकार की सावधानी बरते। अर्थदण्ड, शारीरिकदण्ड एवं मृत्युदण्ड अपराध की प्रकृति एवं प्रवृत्ति को गम्भीरता से विचार करने के बाद निर्धारित करे।
15. **पुरोहितानुगामी :–** जिस प्रकार आचार्य के पीछे शिष्य, पिता के पीछे पुत्र और स्वामी के पीछे सेवक चलता है उसी प्रकार राजा को उच्चकुलोत्पन्न, शीलगुणसम्पन्न, वेद–वेदांगों का ज्ञाता, ज्योतिष्शास्त्र, शकुनशास्त्र एवं दण्डनीति में पारंगत, अथर्ववेद में निर्दिष्ट उपायों द्वारा दैवी तथा मानुषी विपत्तियों का प्रतिकार करने वाले योग्यताओं से सम्पन्न पुरोहित का अनुगामी होना चाहिए।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आचार्य कौटिल्य ने राजा के कर्त्तव्यों पर सूक्ष्म दृष्टि से दृष्टिपात करते हुए उसक चारित्रिक, भौतिक, इहलौकिक एवं पारलौकिक मर्यादा को ध्यान में रखा है। राजा के कर्त्तव्य निश्चय हीं आदर्श के एक उच्च मानदण्ड को स्पर्श करता है।

****

कौटिल्य के अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण की विषय–वस्तु

आचार्य कौटिल्य का व्यक्तित्व एक पारंगत राजनीतिज्ञ के रूप में भारत के राजनीतिक इतिहास में अमर है तथा इनकी लेखिनी से प्रसूत अर्थशास्त्र अपनी अतुलनीय, अद्‌भुत विषय–विवेचन पद्धति के कारण संस्कृतसाहित्य में राजनीति और शासन के क्षेत्र में विश्वकोष है।

'अर्थशास्त्र' को परिभाषित करते हुए आचार्य चाणक्य ने स्वयमेव लिखा है – ***''मनुष्याणां वृत्तिरर्थः, मनुष्यवती भूमिरित्यर्थः, तस्याः पृथिव्या लाभपालनोपायः शास्त्रमर्थशास्त्रम् इति।''*** अर्थात् – मनुष्यों की जीविका को अर्थ कहते हैं। मनुष्यों से युक्त भूमि को भी अर्थ कहते हैं। इस प्रकार की भूमि को प्राप्त करने और उसकी रक्षा करने वाले उपायों का निरूपण करने वाला शास्त्र 'अर्थशास्त्र' कहलाता है।

आचार्य चाणक्य के मत में यह अर्थशास्त्र धर्म, अर्थ तथा काम में प्रवृत्त कराने के साथ–साथ उनकी रक्षा करता है तथा धर्म के विरोधी अधर्मों को नष्ट करता है।

अध्ययन–सौकर्य की दृष्टि से अर्थशास्त्र 15 अधिकरणों, 150 अध्यायों तथा 180 प्रकरणों में विभक्त है।

कौटिलीय अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण की विषयवस्तु अत्यन्त सारगर्भित एवं सम्पूर्ण अर्थशास्त्र की नींव है। प्रथम अधिकरण की विषय–वस्तु को निम्नलिखित विन्दुओं के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है –

1. विद्या :– आचार्य कौटिल्य के अनुसार विद्याएँ चार हैं – आन्वीक्षकी, त्रयी, वार्त्ता एवं दण्डनीति। इसका वर्णन प्रथम अधिकरण में किया गया है। आन्वीक्षकी विद्या (सांख्य, योग और लोकायत) को सर्वदा हीं सभी विद्याओं को प्रदीप्त करने वाली, सभी कार्यों की सिद्धि में सहायक कहा गया है।
2. त्रयीस्थापना :– इसमें वेद, वेदांग में निरूपित चतुर्वर्ण और चारों आश्रमों के कर्त्तव्य का विस्तृत विवेचन है तथा इसे लोकोपकारक कहा गया है।
3. वार्तादण्डनीतिस्थापना :– कृषि, पशुपालन और व्यापार वार्त्ता के विषय हैं। इसी विद्या से अपार्जित कोश और सेना के बल पर राजा स्वपक्ष और परपक्ष को वश में कर लेता है। राजा की दण्डव्यवस्था से रक्षित चारों वर्ण एवं आश्रम तथा सम्पूर्ण लोक अपने–अपने धर्मों एवं कर्त्तव्य कर्मों में प्रवृत्त होकर निरन्तर अपनी–अपनी मर्यादा में बने रहते हैं। इसका विस्तृत विवेचन है।
4. वृद्धसंयोग :– इसमें कहा गया है कि आन्वीक्षकी, त्रयी और वार्त्ता इन तीन विद्याओं का अस्तित्व दण्डनीति पर आधारित है। इस अधिकरण में कृत्रिम और स्वतः सिद्ध शिक्षा का विस्तृत वर्णन है।
5. इन्द्रिय जय :– इसमें इन्द्रियों पर विजय की विधियों, इसके परिणाम तथा इन्द्रिय की अधीनता के दुष्परिणाम वर्णित हैं।
6. राजर्षिवृत :– इस अधिकरण में राजा के कर्त्तव्यों पर विशद् वर्णन है। योग्य एवं आदर्श राजा के कर्त्तव्यों का पालन कर सफल शासक बन सकता है।
7. अमात्य नियुक्ति :– इस प्रसंग में राजा के द्वारा अमात्यों की नियुक्ति के सम्बन्ध में चर्चा की गई है। राजा विद्या, बुद्धि, ाहस, गुण, दोष, देश, काल और पात्र का विचार करके हीं अमात्यों की नियुक्ति करे।

8. मंत्री और पुरोहित की नियुक्ति :– इस प्रसंग में मंत्री और पुरोहित की नियुक्ति के बारे में वर्णन किया गया है। राजा प्रकृति की परीक्षा के बाद हीं इन पदों पर नियुक्ति करे।
9. अमात्यों के आचरण की परीक्षा :– इस प्रसंग में आचार्य कौटिल्य ने अमात्यों के आचरण की परीक्षा की विधियों का विशद् वर्णन प्रस्तुत किया है।
10. गुप्तचरों की नियुक्ति :– अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण में गुप्तचरों की नियुक्ति के बारे में भी बताया गया है। गुप्तचरों के प्रकार, गुप्तचरों के कार्य एवं गुप्तचरों की धन–मान का वर्णन किया गया है।
11. राजा के कार्य व्यापार – आचार्य कौटिल्य ने अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण में हीं राजा के कार्य–व्यापार का निरूपण किया है। किस प्रकार राजा अपनी प्रजा को सन्तुष्ट कर सकता है इसका भी विवेचन किया गया है।
12. राजभवन का निर्माण :– राजभवन का निर्माण कैसे किया जाय? राजभवन के निर्माण में क्या–क्या सावधानी बरती जाय? इन समस्त बातों का वर्णन भी प्रथम अधिकरण में मिलता है।
13. आत्मरक्षा :– राजा के आत्म–रक्षा का वर्णन एवं परिजनों के कर्त्तव्य पर विरूतृत चर्चा की गई है।

निष्कर्षतः अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण की विषय वस्तु विस्तृत एवं सारगर्भित है। एक सफल प्रशासक के गुणों की चर्चा एवं एक आदर्श राजा की विशिष्टताओं का विवेचन इसमें भली–भाँति किया गया है। राजा की सफलता, राजतन्त्र की सफलता एवं धर्म–अर्थ–काम इन तीन पुरूषार्थों का विस्तृत विवेचन है जिसमें अर्थ पर विशेष बल दिया गया है क्योंकि अर्थ से हीं धर्म और काम की भी सिद्धि होती है ।

****

कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र लघूत्तरीय

1. अर्थशास्त्र में कुल अधिकरण – 15 (पंचदशाधिकरणानि)
2. अर्थशास्त्र में कुल अध्याय – 150 (सपंचाशदध्यायशतम्)
3. अर्थशास्त्र में कुल प्रकरण – 180 (साशीतिप्रकरणशतम्)
4. अर्थशास्त्र में कुल श्लोक – 6000 (षट् श्लोकसहस्राणि)
5. अर्थशास्त्र के रचयिता – कौटिल्य, चाणक्य, विष्णुगुप्त।
6. चाणक्य से सम्बन्धित कथा वाला पुराण – विष्णुपुराण।
7. नन्द वंश का विनाशक एवं मौर्य वंश की प्रतिष्ठा से सम्बन्धित – कौटिल्य।
8. चाणक्य का शिष्य – चन्द्रगुप्तमौर्य।
9. चन्द्रगुप्त का पुत्र एवं पौत्र – बिन्दुसार, अशोक।
10. चन्द्रगुप्त द्वारा मगध की गद्दी पर बैठना – 322 ई0 पूर्व
11. चन्द्रगुप्त मौर्य की प्रशासनिक स्थिरता हेतु राजनैतिक संहिता – अर्थशास्त्र।
12. अर्थशास्त्र के मंगलाचरण में स्तुति – शुक्र और बृहस्पति *(नमः शुक्र बृहस्पतिभ्याम्*)
13. कौटिल्य के मत में विद्यायें – 4 (*आन्वीक्षकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्चेति विद्याः*)
14. मनु के मत में विद्यायें – 3 *(त्रयीवार्ता दण्डनीतिश्चेति मानवाः)*
15. बृहस्पति के मत में विद्यायें – 2 (*वार्ता और दण्डनीति*)
16. मनु के मत में विद्यायें – 1 (*दण्डनीति*)
17. आन्वीक्षकी विद्या में अन्तर्गत समावेश – सांख्य, योग और लोकायत (*सांख्ययोगोलोकायतं चेत्यान्वीक्षकी*)
18. कौटिल्य मत में त्रयी के अन्तर्गत समावेश – साम, ऋक् तथा यजुः।

19. कौटिल्य मत में वेद के अन्तर्गत समावेश – त्रयी, अथर्ववेद और इतिहासवेद।
20. वेदांग – 6 (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्दोविचिति, ज्योतिष्)
21. कौटिल्य मत में ब्राह्मण का स्वधर्म – 6 (अध्ययन,अध्यापन, यजन,याजन, दान,प्रतिग्रह)
22. कौटिल्य मत में क्षत्रिय का स्वधर्म – 5 (अध्ययन, यजन, दान, शस्त्रजीव, भूतरक्षण)
23. कौटिल्य मत में वैश्य का स्वधर्म – 4 (अध्ययन, यजन, दान, वार्ता)
24. कौटिल्य मत में शूद्र का स्वधर्म – 3 (द्विजातिशुश्रूषा, वार्ता, कारूकुशीलवकर्म)
25. कौटिल्य मत में वार्ता के विषय – 3 { कृषि, पशुपालन और वाणिज्य **(कृषिपशुपाल्ये वाणिज्या च वार्ता)**}
26. कौटिल्य मत में गृहस्थ का धर्म – **स्वकर्माजीवः, विवाह, ऋतुगामी, देवपित्रतिथिभृत्येषु त्यागः।**
27. कौटिल्य मत में ब्रह्मचारी का धर्म – **स्वाध्याय, अग्निकार्य, अभिषेक, भैक्षव्रतत्व आदि।**
28. कौटिल्य मत में वानप्रस्थी का धर्म – **ब्रह्मचर्यं, भूमि पर शयन, जटाऽजिनधारण, अग्निहोत्र, अभिषेक,देवतापित्रतिथिपूजा, वन्य–आहार।**
29. कौटिल्य मत में संन्यासी का धर्म – **संयतेन्द्रियत्व, अनारम्भ, निष्किंचन, संगत्याग, भैक्षम्, अनेकत्र–अरण्यवासो, वाह्याभ्यन्तर शौच।**
30. कौटिल्य मत में समस्त वर्ण एवं आश्रम का धर्म – 6 (अहिंसा, सत्य, शौच, अनसूया, अनृशंस्य, क्षमा।)
31. आन्वीक्षकी त्रयी वार्ता के योगक्षेम का साधन – दण्ड (***आन्वीक्षकीत्रयीवार्तानां योगक्षेमसाधनो दण्डः***)
32. कौटिल्य मत में दण्ड का स्वरूप – ***यर्थाहः दण्डः पूज्यः।*** (समुचित दण्ड पूजनीय होता है।)
33. कौटिल्य मत में दण्ड की विशेषता – ***चतुर्वर्णाश्रमो लोको राज्ञा दण्डेन पालितः।*** (समुचित दण्ड के द्वारा ही राजा चारो वर्ण और चारो आश्रमों की संसार में रक्षा करता है।)

34. कौटिल्य मत में विवाह के प्रकार – 8 (ब्राह्म, प्राजापत्य, आर्ष, दैव, गान्धर्व, आसुर, राक्षस और पैशाच।)
35. धर्म विवाह के अन्तर्गत आने वाले विवाह – ब्राह्म, प्राजापत्य, आर्ष, और दैव विवाह।
36. पितृप्रमाणाः विवाहाः – ब्राह्म, प्राजापत्य, आर्ष और दैव।
37. मातृपितृप्रमाणाः विवाहाः – गान्धर्व, आसुर, राक्षस और पैशाच।
38. ब्राह्मविवाह – कन्यादानं कन्यामलंकृत्य ब्राह्मो विवाहः।
39. प्राजापत्य विवाह – ***सहधर्मचर्या प्राजापत्यः***।
40. आर्ष विवाह – ***गोमिथुनादानादार्षः***।
41. दैव विवाह – ***अन्तर्वेद्यामृत्विजे दानाद् दैवः***।
42. गान्धर्व विवाह – ***मिथस्समवायाद् गान्धर्वः***।
43. आसुर विवाह – ***शुल्कादानादासुरः***।
44. राक्षस विवाह – ***प्रसह्यादानाद् राक्षसः***।
45. पैशाचविवाह – ***सुप्तादानात् पैशाचः***।
46. कौटिल्य मत में अरिषड्वर्ग – **काम, क्रोध, लोभ, मान, मद और हर्ष।**
47. मनु मत में मन्त्रिपरिषद् में आमात्यों की संख्या – 12
48. वृहस्पति के अनुसार मन्त्रिपरिषद् में आमात्यों की संख्या – 16
49. औशनस (शुक्र) के अनुसार मन्त्रिपरिषद् में आमात्यों की संख्या – 20
50. कौटिल्य के अनुसार मन्त्रिपरिषद् में आमात्यों की संख्या – **यथा सामर्थ्यम्।**
51. इन्द्र के मन्त्रिपरिषद् में ऋषियों की संख्या – 1000
52. कौटिल्य मत में गुप्तचर (गूढ़पुरूष) – दो प्रकार के {**संस्था और संचार** (भ्रमणशील)}
53. संस्था के अन्तर्गत गूढ़पुरूष –(5) **कापटिक, उदास्थित, गृहपतिक, वैदेहक और तापस**
54. संचार के अन्तर्गत गूढ़पुरूष –(4**) सत्री, तीक्ष्ण, रसद और भिक्षुकी।**
55. विद्यार्थी की वेश–भूषा में रहने वाला गूढ़पुरूष – कापटिक।
56. संन्यासी की वेश–भूषा में रहने वाला गूढ़पुरूष – उदास्थित।
57. गरीब किसान की वेश–भूषा में रहने वाला गूढ़पुरूष – गृहपतिक।

58. व्यापारी की वेश–भूषा में रहने वाला गूढ़पुरूष – वैदेहक।
59. सिर मुँडा/जटा धारण कर तापस की वेश–भूषा में रहने वाला गूढ़पुरूष – तापस।
60. तापस का सहायक गुप्तचर – सत्री
61. द्रव्य के लिए हाथी, बाघ, साँप से भी भिड़ जाने वाला गुप्तचर – तीक्ष्ण।
62. भाई बन्धुओं से स्नेह न रखने वाला, क्रूर स्वभाव, आलसी गुप्तचर – रसद (जहर देने वाला।)
63. परिव्राजिका, वृषली, नौकरानी के रूप में रहने वाली गुप्तचरी – भिक्षुकी।
64. गुप्त उपायों से अमात्यों के आचरण की परीक्षा – उपधा।
65. कौटिल्य मत में उपधाएँ – (4) **धर्मोपधा, अर्थोपधा, कामोपधा और भयोपधा।**
66. गुप्त धार्मिक उपायों द्वारा आमात्य के हृदय की पवित्रता–परीक्षा – धर्मोपधा।
67. गुप्त आर्थिक उपायों द्वारा आमात्य के हृदय की पवित्रता–परीक्षा – अर्थोपधा।
68. गुप्त काम सम्बन्धी उपायों द्वारा आमात्य के हृदय की पवित्रता–परीक्षा – कामोपधा।
69. गुप्त भय सम्बन्धी उपायों द्वारा आमात्य के हृदय की पवित्रता–परीक्षा – भयोपधा।
70. धर्मोपधा में उत्तीर्ण आमात्य की नियुक्ति – धर्मस्थानीय, कण्टकशोधन कार्यो में।
71. अर्थोपधा में उत्तीर्ण आमात्य की नियुक्ति – समाहर्ता, सन्निधाता कार्यो में।
72. कामोपधा में उत्तीर्ण आमात्य की नियुक्ति – विलास स्थानों, विहारों तथा अन्तःपुर रक्षा के कार्यो में।
73. भयोपधा में उत्तीर्ण आमात्य की नियुक्ति – राजा के अंगरक्षक के रूप में।
74. चारों उपधाओं में उत्तीर्ण आमात्य की नियुक्ति – मन्त्रिपद पर।
75. अमात्योत्पत्तिः, उपधाभिः शौचाशौचज्ञानममात्यानाम्, गूढपुरूषोत्पत्तिः आदि का वर्णन है – **विनयाधिकारिक** नाम प्रथम अधिकरण में।
76. दुर्गविनिवेश, विभिन्न अध्यक्षों का वर्णन है – **अध्यक्षप्रचार** नामक द्वितीय अधिकरण में।

****

महत्त्वपूर्ण वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. कौटिल्य के अर्थशास्त्र में कुल कितने अधिकरण हैं –

   (क) 15 (ख) 25 (ग) 5 (घ) 43

2. कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र के मंगलाचरण में किसे नमस्कार किया है –

   (क) शुक्र और बृहस्पति (ख) शुक्र और शनि

   (ग) बृहस्पति और बुध (घ) बुध और पृथिवी

3. कौटिल्य के अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण का नाम क्या है –

   (क) धर्मस्थीय (ख) अध्यक्ष प्रचार **(ग) विनयाधिकारिक** (घ) कण्टकशोधन

4. कौटिल्य के अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण में कितने अध्याय हैं –

   (क) 20 (ख) 16 (ग) 10 (घ) 07

5. कौटिल्य के अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण में कितने प्रकरण हैं –

   (क) 07 (ख) 10 (ग) 16 (घ) 20

6. कौटिल्य के अर्थशास्त्र के पठितांश प्रथमाधिकरण के प्रथमोऽध्याय का नाम क्या है–

   (क) आन्वीक्षकी स्थापना **(ख) त्रयी स्थापना**

   (ग) वार्त्तास्थापना दण्डनीतिस्थापना च (घ) वृद्धसंयोग

7. कौटिल्य के अर्थशास्त्र के पठितांश प्रथमाधिकरण के प्रथम प्रकरण का नाम क्या है–

   (क) इन्द्रियजय **(ख) विद्या समुद्देश्य**

   (ग) मन्त्रि–पुरोहितयोर्नियुक्तिः (घ) वृद्धसंयोग

8. कौटिल्य के अनुसार विद्याएँ कितनी हैं –

   (क) 2 (ख) 3 **(ग) 4** (घ) 5

9. कौटिल्य ने कितने शत्रु वर्ग की चर्चा की है –

(क) 5 **(ख) 6** (ग) 7 (घ) 8

10. त्रिवर्ग किसे कहा गया है –

(क) धर्म–अर्थ–काम (ख) भय–निद्रा–आलस्य

(ग) काम–क्रोध–लोभ (घ) हिंसा–अहिंसा–प्रतिहिंसा

11. आश्रमों की कितनी संख्या कही गयी है –

(क) 3 **(ख) 4** (ग) 6 (घ) 8

12. कौटिल्यार्थशास्त्र में सर्वप्रथम किन्हें प्रणाम किया गया है –

(क) ब्रह्मा–विष्णु (ख) श्री गणेश **(ग) शुक्र–वृहस्पति** (घ) रवि–सोम

13. कौटिल्य का वास्तविक नाम क्या था –

(क) विष्णुगुप्त (ख) सोमगुप्त (ग) कोमलगुप्त (घ) सुकोमलगुप्त

14. कौटिल्य के आश्रय दाता राजा कौन थे –

(क) समुद्रगुप्त **(ख) चन्द्रगुप्त** (ग) सुभद्रगुप्त(घ) स्कन्दगुप्त

15. अर्थशास्त्र विषयक ग्रन्थ का निर्माण कब हुआ था –

(क) 700 ई0 पूर्व (ख) 500 ई0 पूर्व **(ग) 300 ई0 पूर्व** (घ) 200 ई0 पूर्व

16. कौटिल्य के अनुसार विद्याएँ कितने प्रकार की हैं –

(क) तीन **(ख) चार** (ग) पाँच

17. कौटिल्य के अनुसार विद्याएँ हैं :

(क) दो (ख) तीन (ग) पाँच **(घ) चार**

18. कौटिल्य के अर्थशास्त्र में अधिकरण हैं :

(क) 14 **(ख) 15** (ग) 16 (घ) 17

19. कौटिल्य के आश्रयदाता हैं :

(क) समुद्रगुप्त (ख) पद्मगुप्त (ग) स्कन्दगुप्त **(घ) चन्द्रगुप्त मौर्य**

20. कौटिल्य के अनुसार नियमित स्वाध्याय किसका धर्म है?

(क) ब्रह्मचारी का (ख) संन्यासी का (ग) गृहस्थ का (घ) वानप्रस्थी का

****

कौटिल्य का अर्थशास्त्र

कुल अधिकरण – 15, कुल प्रकरण –180 , कुल अध्याय –150

कौटिल्य के अर्थशास्त्र के प्रत्येक अधिकरण के नामः–

1. विनयाधिकारिकम्
2. अध्यक्षप्रचारः
3. धर्मस्थीयम्
4. कण्टक–शोधनम्
5. योग–वृत्तम्
6. मण्डल–योनिः
7. षाड्गुण्यम्
8. व्यसनाधिकरणम्
9. अभियास्यत्कर्म
10. सांग्रामिकम्
11. संघवृत्तम् (भेदकप्रयोग–उपांशुदण्ड)
12. आबलीयस
13. दुर्गलम्भोपाय
14. औपनिषदिक
15. तन्त्रयुक्ति

कौटिल्य के अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण ''विनयाधिकारिकम्'' के अन्तर्गत कुल प्रकरण 18 हैं। जो इस प्रकार हैं –

1. विद्यासमुद्देशः
2. वृद्धसंयोग
3. इन्द्रियजय
4. अमात्योत्पत्तिः
5. मन्त्रि पुरोहितोत्पत्ति
6. उपधाभिः शौचाशोचज्ञानममात्यानाम्
7. गूढपुरूषोत्पत्तिः

8. गूढपुरूषप्रणिधिः
9. स्वविषयेकृत्याकृत्यपक्षोपग्रहः
10. परविषयेकृत्याकृत्यपक्षोपग्रहः
11. मन्त्राधिकारः
12. दूतप्रणिधिः
13. राजपुत्ररक्षणम्
14. अवरूद्धवृत्तम्
15. अवरूद्धे च वृत्तिः
16. राजप्रणिधिः
17. निशान्तप्रणिधिः
18. आत्मरक्षितकम्